International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor- 5.414, Volume 5, Issue 1, January 2018
Website- www.aarf.asia, **Email** : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

अभिनय–विज्ञान का स्वरूप

अपर्णा
शोधच्छात्रा संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ।

''अभिनय–विज्ञान'' यह दो शब्दों से मिलकर बना है। अभिनय + विज्ञान। अभिनय शब्द की उत्पत्ति 'अभि' उपसर्गपूर्वक 'णीञ्प्रापणे' (नी) धातु से 'अच्' प्रत्यय लगाकर हुई है।[1] अभिनय का अर्थ है– नाट्य प्रयोग के अर्थों को प्रेक्षकों अर्थात् सामाजिकों के समक्ष प्रत्यक्षतः प्रदर्शित करना। विज्ञान भी दो शब्दों से मिलकर बना है। वि+ज्ञान जहाँ 'वि' का अर्थ है विशिष्ट। विज्ञान का अर्थ है विशिष्ट ज्ञान। अभिनय–विज्ञान में हम अभिनय के विशिष्ट ज्ञान का अध्ययन करते हैं जिसके द्वारा सामाजिक अभिनेय (रामादि) का साक्षात्करात्मक अनुभव किया करते हैं, उसे अभिनय कहते हैं। अभिनय के इसी अर्थ को स्पष्ट करते हुए आचार्य भरतमुनि ने कहा है–

विभावयति यस्माच्च नानार्थानिह प्रयोगतः।
शाखाङ्गोपाङ्गसंयुक्तस्तस्मादभिनयः स्मृतः।।[2]

अर्थात् जिसके साङ्गोपाङ्ग प्रयोग के द्वारा नाट्य के नानाविध अर्थों का सामाजिक को विभावनया रसास्वादन कराया जाय, उसे अभिनय कहते है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में अवस्थानुकार को अभिनयबताया है।

भवेदभिनयोऽवस्थानुकारः।[3]

जिसमें अभिनेता द्वारा शरीर, मन एवं वाणी से अभिनेय (रामादि) की अवस्थाओं का अनुकरण होता है, उसे अभिनय कहते है। इस प्रकार अभिनेता द्वारा अभिनेय अवस्थाओं का अनुकरण करना 'अभिनय' है।

अभिनय एक वह कला है जिसके द्वारा नट अभिनेय रामादि के क्रिया–कलापों, वेश–भूषा, विविध–चेष्टाओं एवं भाव भंगिमाओं को रंगमंच पर प्रदर्शित कर दर्शकों का मनोरंजन करता है। पात्रों के अनुरूप देशकालोचित वेश–भूषा का संयोजन करता है और अभिनेय पात्रों के मानसिक भावों का प्रकाशन करता है। अभिनय की पूर्णरूपेण सफलता की दृष्टि से अभिनय में अनुकरण नैपुण्य, दृश्य सौष्ठव, श्रुति–माधुर्य एवं परिहास इन चार गुणों का होना परमावश्यक है।[4] अभिनय को अधिक रोचक बनाने के लिए नृत्य, गीत, वाद्य की योजना भी अपेक्षित है। आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में चार प्रकार के अभिनय का उल्लेख किया है– (1) आङ्गिक (2) चाचिक (3) आहार्य (4) सात्विक

विभिन्न प्रकार के अङ्गों के द्वारा प्रदर्शित किये जाने वाले अभिनय को आङ्गिक प्रकार के अंगों के द्वारा प्रदर्शित किये जाने वाले अभिनय को आङ्गिक अभिनय कहते हैं। वाणी के द्वारा काव्य एवं संवादादि का अभिनय 'वाचिक' कहलाता है। जो विधान नेपथ्य के द्वारा उपलब्ध है अर्थात् नेपथ्य रचना का विधान आहार्याभिनय कहलाता है।[5] जिसमें सुख–दुःखादि मनोभावों का अभिव्यंजन होता है, उसे सात्विक अभिनय कहते हैं।''

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

नन्दिकेश्वर ने इन चारों प्रकार के अभिनय को नटराज शिव के चार रूप कहा है। वे (नटराज शिव) ही इसके अधिष्ठाता है।

आङ्गिकं भुवनं यस्य वाचिकं सर्ववाङ्मयम्।
आहार्यं चन्द्रतारादि तं नुमः सात्विकं शिवम्।।[6]

1. आङ्गिक

अंगों के द्वारा प्रदर्शित किया जाने वाला अभिनय आङ्गिक अभिनय कहलाता है। नाट्यशास्त्र में आङ्गिक अभिनय के तीन प्रकार बताए गए हैं–

त्रिविधस्त्वाङ्किो ज्ञेयः शारीरो मुखजस्तथा।
तथा चेष्टाकृतश्चैव शाखाङ्गोपाङ्गसंयुतः।।[7]

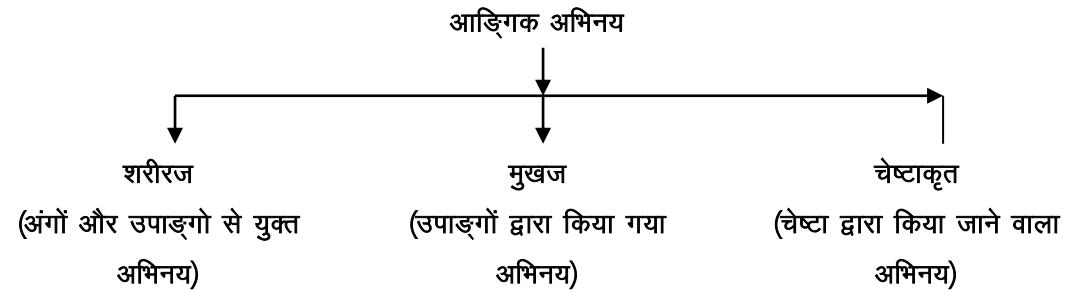

इस प्रकार अङ्ग, प्रत्यङ्ग एवं उपाङ्गो द्वारा किये जाने वाले अभिनय को आङ्गिग अभिनय कहते हैं।[8]

नाट्यशास्त्र में 6 अङ्ग, 6 प्रत्यङ्ग एवं 6 उपाङ्ग वर्णित है जो इस प्रकार है–

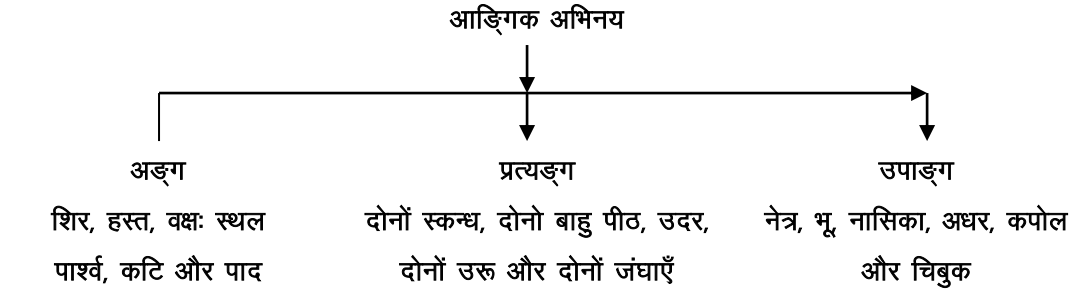

वाचिक अभिनय

नाटय में वाचिक अभिनय का महत्वपूर्ण स्थान है। भरतमुनि ने वाचिक अभिनय को नाट्य का शरीर कहा है, क्योंकि अभिनय के अङ्ग उसके अर्थ को व्यंजित करते हैं।[9] नाटककार वाचिक अभिनय के आधार पर ही और इसी के माध्यम से अपनी कथावस्तु को सामाजिक के सामने प्रस्तुत करता है। नाट्य में जिस संवाद शैली या कथोपकथन का प्रयोग किया जाता है वह जीवन की सम्पूर्ण परिस्थिति के साथ सजीव रूप में जोड़ा जा सकता है। नाटकीय संवाद हमारे चिन्तन एवं मनन की भाषा की अपेक्षा जीवन की भाषा के अधिक निकट होता है। पाठ्य या संवाद वाचिक अभिनय का प्राण है। नाट्यशास्त्र में पाठ्य के छः अङ्ग बताए गए हैं जो इस प्रकार है–

स्वर, स्थान, वर्ण, काकु, अलङ्कार और अङ्ग।

वाचिक अभिनय का मुख्य सम्बन्ध वाणी से है। नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने कहा है कि ब्रह्माण्ड में वाणी से बढ़कर कोई भी नहीं है। वाणी ही समस्त विश्व का कारण है।[10] अंतः अभिनेता को शुद्ध, परिनिष्ठित एवं युक्तिसंगत वाणी का प्रयोग करना चाहिए।

आहार्य अभिनय

हार, केयूर, वेश–भूषा आदि प्रसाधनों से सुसज्जित होकर किया जाने वाला अभिनय आहार्य कहलाता है।[11]

नाट्यशास्त्रानुसार अवस्था के अनुरूप प्रकृतिगत, वेशविन्यास अलङ्कार–परिधान, अङ्ग–रचना आदि को 'आहार्य' अभिनय कहा जाता है।

आहार्य अभिनय के चार प्रकार है–

चतुर्विधं तु नेपथ्यं पुस्तोऽलंङ्कार एव च।
तद्यङ्गरचना चैव ज्ञेयं सञ्जीवयेव च।।[12]

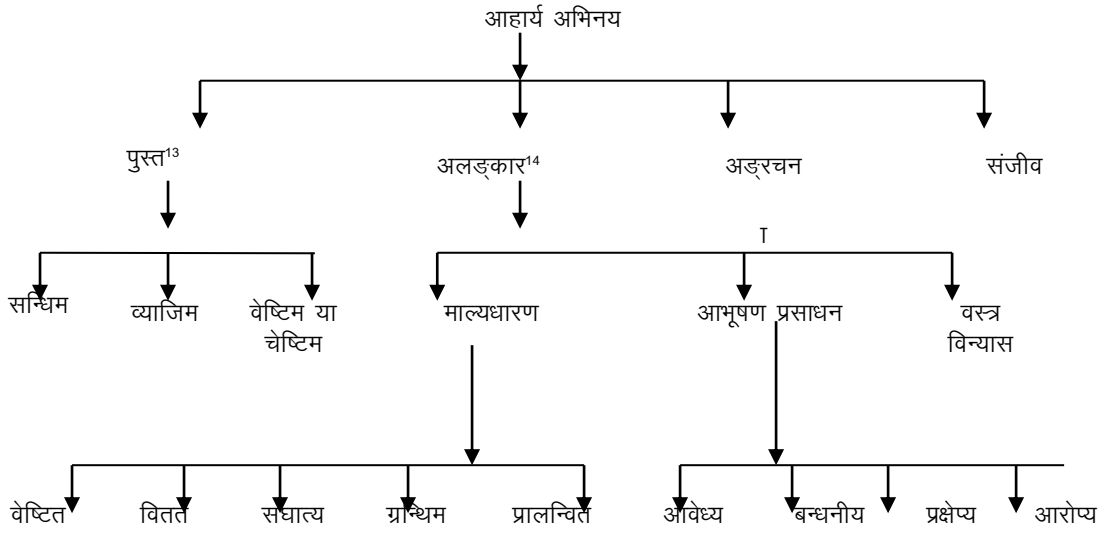

(I)'पुस्त' का अर्थ है– संयोजन अर्थात् सांकेतिक पदार्थों की रचना। नाट्य में इस 'पुस्त' विधि का प्रयोग शैल, यान, विमान,वाहन आदि को रङ्गमंच पर प्रस्तुत करने में किया जाता है।[15] पुस्तविधि के तीन रूप हैं–

(i) जो वस्तुएँ परस्पर सन्धि करके रङ्गोपयोगी बनाई जाती है, सन्धिम पुस्त कहते हैं।

(ii) यान्त्रिक साधनों के द्वारा भौतिक पदार्थों को रंगमंच पर प्रस्तुत करना व्याजिम पुस्त कहते हैं।

(iii) वेष्टिम पुस्त में किसी वस्तु के स्वयप को वस्त्रादि से लपेट कर प्रयोग किया जाता है।

(II) अलङ्कार– आभूषण, वस्त्र, पुष्पमालादि का अनेक प्रकार से समायोजन अलङ्कार कहलाता है। अलङ्कार पात्रों का मनोहारी प्रसाधन है।

(III) अङ्गरचना–अङ्गरचना आहार्य का महत्वपूर्ण प्रकार है। भरतमुनि के अनुसार पहले पात्रों को अपने अङ्गों को रंगों से रंगना चाहिए, उसके बाद प्रकृति एवं कार्य के अनुरूप वेश धारण करना चाहिए।

(IV) **संजीव–** इसके अन्तर्गत रङ्गमंच पर तीन प्रकार के प्राणियों– द्विपद, चतुष्पद और अपद को प्रस्तुत करने का विधान बताया गया है। द्विपद में मनुष्य और पक्षी, चतुष्टपद में गाय, घोड़ा, हिरण आदि पशु और अपद में साँप आदि को प्रस्तुत करने की कल्पना की जा सकती है। 'संजीव' के अन्तर्गत नाट्यशास्त्र में 'पटी' की भी परिकल्पना की गई है। 'पटी' एक प्रकार का आवरण है, इसका आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है।[17]

आहार्य अभिनय नाट्य प्रयोग एवं सारूप्य–सृजन की एक महत्वपूर्ण प्रकार है। इसके द्वारा दृश्यों को कृत्रिम रूप से रंगमंच पर प्रस्तुत किया जाता है।

सात्विक अभिनय

नाट्य सत्वे प्रतिष्ठितम्[18] नाट्य ही रस है और रस का अन्तरंग सात्विक है तथा सात्विक में ही नाट्य प्रतिष्ठित होता है। नन्दिकेश्वर ने सात्विक अभिनय को शिव का रूप माना है– तुं नुमः सात्विकं शिवम्।[19] भरतमुनि ने सात्विक अभिनय के

अन्तर्गत स्त्री–पुरुषों के शृंगार सम्बन्धी अनेक प्रकार के हाव–भावों का वर्णन किया है। सात्विक भाव 8 हैं– स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभङ्ग, वेपथु, वैवर्ण्य अश्रु और प्रलय[20]।

इनका प्रयोग विभिन्न अभिनयों में परिस्थितिनुसार भिन्न–भिन्न विधियों से किया जाता है। सात्विक भावों के द्वारा अभिनेता मुख से कुछ बिना कहे ही केवल भावों को प्रकट करके सामाजिकों के समक्ष अपने मनोगत भावों को प्रकट कर सकता है। सात्विक भाव के पूर्ण होने पर ही नाट्य–प्रयोग श्लाघनीय होता है।

सन्दर्भ

1. अभिनवभारती, भाग 2 पृ0 2
2. नाट्यशास्त्र 8/8
3. साहित्यदर्पण 6/2
4. अभिनयदर्पण पृ0 22–23
5. नाट्यशास्त्र 21/3 पृ0 220 आहार्याभिनयो नाम ज्ञयो नेपथ्यजो विधिः।
6. अभिनयदर्पण 1
7. नाट्यशास्त्र– 8/11
8. अभिनयदर्पण–42
9. नाट्यकला, पृ0 161–162
10. नाट्यशास्त्र–14/3
11. अभिनयदर्पण
12. नाट्यशास्त्र 21/5
13. वही 21/16
14. वही, 21/10–12
15. वही 21/7–9
16. वही, पृ0 21/77
17. वही 21/162–163, 186
18. नाट्यशास्त्र, 22/1
19. अभिनयदर्पण, 1
20. नाट्यशास्त्र 7/95